अध्याय – 18

पारिस्थितिक तंत्र – संरचना एवं कार्य

(Ecosystem : Structure and Function)

प्रकृति में सभी जीव परस्पर एवं अपने भौतिक वातावरण के कारकों के साथ अन्योन्यक्रिया करते रहते हैं। इन क्रियाओं के परिणामस्वरूप जीवों और उनके भौतिक वातावरण में एक संतुलन बना रहता है तथा पदार्थों का आदान–प्रदान एवं उर्जा का प्रवाह होता रहता है, जो एक समाकलित इकाई बनाते हैं, जिसे पारिस्थितिक तंत्र या पारितंत्र कहते हैं। पारितंत्र, पारिस्थितिकी की मूल प्रकार्यात्मक इकाई है। वास्तव में पारिस्थितिकी का अध्ययन पारिस्थितिक तंत्रों का अध्ययन ही है, जो प्रकृति के समतुल्य है। इकोसिस्टम शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग इंग्लैण्ड के सर आर्थर टेन्सले ने 1935 में किया था। टेन्सले के अनुसार ''वातावरण के जैविक एवं अजैविक कारकों के समाकलन के परिणामस्वरूप निर्मित तंत्र पारिस्थितिक तंत्र कहलाता है। प्रकृति में मुख्य रूप से दो घटकों (1) जैविक (जन्तु एवं वनस्पति) तथा (2) अजैविक वातावरण का समावेश होता है। टैन्सले से पूर्व तथा बाद में भी जीव–पर्यावरण सम्बन्धों को विविध नामों से सम्बोधित किया जाता रहा है। जैसे कार्ल मोबिस ने बायोसिनोसिस, फोर्ब्स ने माइक्रोकोज्म, मिश्रा ने इकोकोज्म आदि, परन्तु इकोसिस्टम शब्द को ही विश्वव्यापी मान्यता प्राप्त हुई।

पारिस्थितिकी तंत्रों के प्रकार (Types of Ecosystem)

जैवमण्डल में विभिन्न प्रकार के पारितंत्र संचालित होते है। इनमें से कुछ प्राकृतिक हैं तथा कुछ मानव द्वारा निर्मित है, जिन्हें कृत्रिम पारिस्थितिक तंत्र कहते हैं। तालाब, झील, मरूस्थल, वन आदि प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र है जबकि खेत, बाग बगीचे, जल जीवशाला आदि कृत्रिम पारिस्थितिक तंत्र के उदाहरण है। पारिस्थितिक तंत्र का आकार भिन्न–भिन्न हो सकता है, जैसे छोटा ताल या विस्तृत वन क्षेत्र। अंतरिक्षयानों तथा जल जीवशालाओं को मानव अभियांत्रिक पारिस्थितिक तंत्र माना जा सकता है। यहॉं यह जान लेना आवश्यक है कि कोई भी पारिस्थितिक तंत्र, स्वतः पूर्ण नहीं होता वरन् अन्य पारिस्थितिक तंत्रों से सम्बन्धित होता है अर्थात अन्योन्याश्रित होता है जैसे समुद्री परितंत्र समीपस्थ स्थलीय पारितंत्रों पर खनिज पदार्थों के लिये निर्भर रहता है और स्थलीय पारितंत्र समुद्र पर जल की नियमित आपूर्ति के लिये आश्रित होते हैं। कोले ने इसके लिये पारिस्थितिकमण्डल शब्द का प्रयोग किया है तथा प्रकृति में पारितंत्रों को दो प्रमुख वर्गो में बांटा है (चित्र 18.1)।

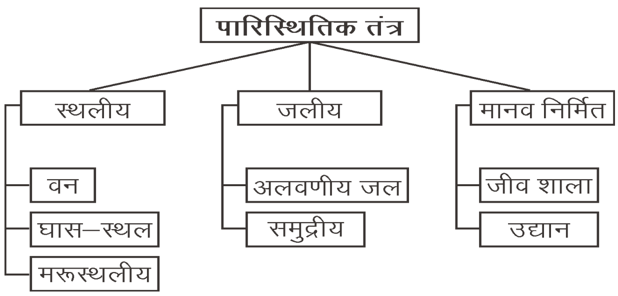

चित्र 18.1 : पारिस्थितिक तंत्रों का वर्गीकरण

1. स्थलीय (Terrestrial) जैसे वन, घासस्थल, मरूस्थल आदि।

2. जलीय (Aquatic) इन्हें पुनः निम्नानुसार विभेदित किया जाता है।

(क) अलवण जलीय – जिसमें (1) सरित (बहता पानी) जैसे झरना, नदी, सरिता आदि तथा (2) स्थिर जलीय (रूका हुआ जल) जैसे झील, तालाब, पोखर, अनूप आदि।

(ख) समुद्रीय या लवण जलीय – जैसे समुद्र, ज्वारनद्मुख, लवण झीलें आदि सम्मिलित है।

पारिस्थितिक तंत्र की संरचना एवं कार्य (Structure and Function of Ecosystem)

किसी भी पारिस्थितिक तंत्र के दो प्रमुख पहलू हैं, संरचना और कार्य। संरचना के अन्तर्गत पारितंत्र के जीवों और पर्यावरण के अजैव घटकों को सम्मिलित किया जाता है। कार्य से हमारा अभिप्राय पारिस्थितिक तंत्र मे जैव ऊर्जा का प्रवाह तथा पोषक

खनिज पदार्थो के परिसंचरण से है। वस्तुतः प्रकृति में ऊर्जा प्रवाह एवं भौतिक तत्वों के परिसंचरण के कारण ही विभिन्न जीव व पर्यावरण के घटक एक पद्धतिबद्ध इकाई के रूप में विद्यमान रहते है।

पारिस्थितिक तंत्र की संरचना

पारितंत्र के मुख्य संरचनात्मक अभिलक्षण, जाति संरचना एवं स्तरीकरण है। इसको जीवों के भोज्य सम्बन्धों द्वारा भी दर्शाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत जातियों की संख्या, जीवों का जैवभार, जीवनवृत और वितरण आदि का अध्ययन किया जाता है। इसके अतिरिक्त अजैव पदार्थों की मात्रा तथा वितरण का अध्ययन भी सम्मिलित है।

पारिस्थितिक तंत्र के घटक (Component of Ecosystm)

पारितंत्र की संरचना के दो मुख्य घटक होते है–

1. जैविक घटक (Biotic Components) – उत्पादक या स्वपोषी पौधे, उपभोक्ता तथा अपघटक जैविक घटक है।

2. अजैविक घटक (Abiotic Components) – खनिज पदार्थ, जल, गैसें, जलवायवीय कारक, ऊर्जा आदि अजैविक घटक है। यद्यपि पारितंत्र के ये संरचनात्मक घटक अवियोज्य होते है, तथापि अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन्हें पृथक–पृथक

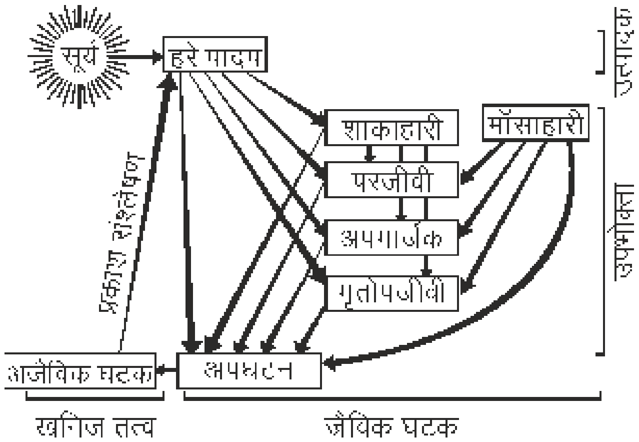

चित्र 18.2 : एक पारितंत्र के विभिन्न घटक और उनके पारस्परिक संबंध

रखा जाता है (चित्र 18.2)।

1. जैविक घटक या जीवीय घटक – इसमें सभी जीवों को सम्मिलित किया जाता है, जो प्रकृति में समुदाय के रूप में रहते है। ये सभी समुदाय परस्पर किसी न किसी रूप में अन्तर सम्बन्धित होते है। लिण्डमेन के अनुसार सभी जीवों के परस्पर अन्तरसम्बन्धों का प्रमुखतः आधार पोषण है। अतः उन्होंने पोषक गतिकी अवधारणा प्रस्तुत की थी। वास्तव में जैविक घटक किसी भी पारिस्थितिक तंत्र की पोषक संरचना को दर्शाते हैं। पोष स्तर की दृष्टि से जीवों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है –

(i) स्वपोषी या उत्पादक (ii) विषमपोषी या उपभोक्ता

(i) **स्वपोषी या उत्पादक** (Autotrophs or Producers)– पारितंत्र के वे सभी पादप एवं जीवाणु सदस्य जो प्रकाश संश्लेषण या जीवाणुक प्रकाश संश्लेषण या रसायन संश्लेषण क्रिया द्वारा अपने भोजन का स्वयं निर्माण करने में सक्षम होते है, स्वपोषी या प्राथमिक उत्पादक कहलाते हैं। ये पौधे तथा जीवाणु सभी प्रकार के जीवों के लिये प्राथमिक उत्पादक होते हैं क्योंकि ये सौर ऊर्जा को रासायनिक स्थितिज ऊर्जा में परिवर्तित कर कार्बनिक पदार्थों (यथा खाद्य पदार्थ) के रूप में संचित करते हैं, जो विषमपोषी स्तर के जीवों के लिये परोक्ष या अपरोक्ष रूप से भोजन के रूप में प्रयुक्त होता है। कोरमोन्डी ने इन्हें उत्पादक की जगह परिवर्तक या पारक्रमी बताया।

(ii) **विषमपोषी या उपभोक्ता** (Heteroptroph or Consumers) – वे सभी जीव जो अपना भोजन स्वयं निर्माण करने में सक्षम नहीं होते हैं व प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राथमिक उत्पादकों द्वारा निर्मित या संचित भोजन पर निर्भर करते हैं, **विषमपोषी या उपभोक्ता** कहलाते हैं। इन्हें पुनः दो श्रेणियों में बाँटा जाता है।

(क) वृहद/गुरू उपभोक्ता या भक्षपोशी या जीवभक्षी– वे जीव जो जटिल कार्बनिक पदार्थों (भोजन) को अपनी पाचन क्रिया द्वारा सरल कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित करते हैं, वृहद/गुरू उपभोक्ता या भक्षपोशी या जीवभक्षी कहलाते हैं। जीवित प्राणी एवं पौधे इनका भोजन होते हैं। ये शाकाहारी (शाक या पादप भक्षी), माँसाहारी (जन्तुभक्षी) अथवा सर्वहारी (सर्वभक्षी अर्थात् सब प्रकार का भोजन ग्रहण करने वाले जीव) हो सकते हैं।

1. प्राथमिक उपभोक्ता (Primary Consumer) – ये प्रथम श्रेणी के उपभोक्ता हैं, जो अपना भोजन सीधे ही हरे पादपों या स्वयंपोषी से प्राप्त करते हैं। अनेक शाकाहारी जन्तु जैसे गाय, बकरी, हिरण आदि पौधों में संचित ऊर्जा के प्रथम उपभोक्ता होने से इन्हें प्राथमिक उपभोक्ता कहा जाता है।

2. द्वितीयक उपभोक्ता (Secondary Consumer)– ये द्वितीय श्रेणी के उपभोक्ता हैं, जो शाकाहारी जन्तुओं या प्राथमिक उपभोक्ताओं को भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं। इन्हें माँसाहारी भी कहते हैं, जैसे मेंढक, कुत्ता, बिल्ली, लोमड़ी, चीता आदि।

3. तृतीयक उपभोक्ता (Tertiary Consumer)– कुछ माँसाहारी जीव जो दूसरे माँसाहारी जीवों या द्वितीयक उपभोक्ता से अपना भोजन ग्रहण करते हैं, तृतीयक उपभोक्ता कहलाते हैं। कुछ उपभोक्ता चरम माँसाहारी प्रवृति के होते हैं, जिनको दूसरे जन्तु मार कर नहीं खाते हैं। इन्हें उच्च या शीर्ष उपभोक्ता कहते

है जैसे गिद्ध, मोर, बाज, शार्क, मगरमच्छ, किलकिला (Kingfisher) आदि।

उपभोक्ता स्तर पर भी कार्बनिक पदार्थों का निर्माण या स्वांगीकरण होता है। ये पाचन क्रिया द्वारा पौधों के कार्बनिक यौगिकों को अपने शरीर के कार्बनिक यौगिकों में बदल देते हैं, जो अगली पोषण रीति के लिये आहार या भोजन का काम करता है। अतः उन्हें द्वितीयक उत्पादक भी कहते हैं, जैसे मधुमक्खियाँ, गाय, बकरी आदि।

(ख) लघु या सूक्ष्म उपभोक्ता या अपघटक जीव – इस श्रेणी के सूक्ष्मजीव विभिन्न कार्बनिक पदार्थों को उनके निर्माणकारी अवयवों में विघटित कर देते हैं। यह सूक्ष्मजीव अपने पाचक एन्जाइमों द्वारा उत्पादक तथा उपभोक्ताओं के मृत शरीरों के जटिल कार्बनिक पदार्थो को सरल अकार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित कर देते हैं। अतः इन्हें रूपान्तरक भी कहते हैं। इस प्रक्रिया में सूक्ष्म उपभोक्ता अवशोषण द्वारा अपना भोजन प्राप्त करते हैं। विघटन की इस क्रिया में जो ऊर्जा निकलती है, उसे अपघटक अपनी विभिन्न जैविक क्रियाओं में उपयोग करते हैं। मुख्य अपघटक जीवाणु, कवक, ऐक्टिनोमाइसिटीज आदि जीव हैं। इन्हें मृतोपजीवी या परासरणजीवी भी कहते हैं। इस क्रिया में विमुक्त सरल अकार्बनिक पदार्थ पुनः उत्पादकों को उपलब्ध हो जाते हैं। अतः लघु उपभोक्ता पारिस्थितिक तंत्र के अस्तित्व के लिये अपरिहार्य हैं।

अजैविक या अजीवीय घटक – भौतिक पर्यावरण के सभी निर्जीव पदार्थ उसके अजैविक घटक कहलाते हैं। ओड़म ने अजैविक घटकों को तीन भागों में विभक्त किया है–

(अ) अकार्बनिक पदार्थ – इसमें जीव वृद्धि के लिये अति आवश्यक खनिजों के लवण तथा गैसें सम्मिलित हैं। इसमें पोटेशियम, कैल्सियम, मैग्निशियम जैसे खनिज, सल्फेट, नाइट्रेट, फॉस्फेट जैसे लवण तथा ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन डाइऑक्साइड जैसी गैसें सम्मिलित हैं। ये सभी स्वपोषियों या उत्पादक घटकों (जैसे हरे पादप) के पोषक तत्व अथवा अपरिष्कृत सामग्री है। सर्वप्रथम उत्पादक इनका उपयोग करते हैं, उत्पादकों से ये उपभोक्ताओं में जाते हैं तथा वहाँ से मुक्त होकर फिर से पर्यावरण में आते रहते हैं। पारिस्थितिक तंत्र में इस प्रकार खनिज पदार्थों का निरन्तर चक्रीय भ्रमण होता रहता है, जिसे जैव भू–रासायनिक चक्र कहते हैं।

(ब) कार्बनिक पदार्थ – इन पदार्थों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। प्रथम श्रेणी में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, लिपिड्स जैसे कार्बनिक यौगिक एवं इनके अपघटन से उत्पन्न पदार्थ जैसे यूरिया, ह्यूमस आदि जो वातावरण में अकार्बनिक पदार्थों के समान मुक्त अवस्था में मिलते हैं, सम्मिलित हैं दूसरी श्रेणी में वे कार्बनिक पदार्थ हैं, जो केवल जीवित कोशिकाओं में पाये जाते हैं जैसे एडिनोसीन ट्राई फॉस्फेट। तीसरी श्रेणी में वे पदार्थ समाहित हैं, जिनको उपरोक्त दोनों के बीच की कड़ी माना जा सकता है, जैसे पर्णहरित एवं डीएनए। इस श्रेणी के पदार्थ जैविक एवं अजैविक घटकों के मध्य की योजक कड़ी का काम करते हैं।

(स) जलवायुवीय कारक – इसके अन्तर्गत वायु, प्रकाश, आर्द्रता, ताप, वर्षा, सौर ऊर्जा आदि भौतिक कारक आते हैं, जो पारितंत्र में उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं की संख्या का निर्धारण करते हैं। इनका विस्तृत वर्णन पूर्व के अध्याय में किया जा चुका है।

किसी पारिस्थितिक तंत्र में नियत समय में उपस्थित अजैव पदार्थों की मात्रा को स्थायी अवस्था या स्थायी गुणता कहा जाता है, जबकि जैविक पदार्थो या कार्बनिक पदार्थों की कुल मात्रा को खड़ी फसल या स्थित शस्य कहते है। इसे इकाई क्षेत्र में उपस्थित जीवों की संख्या या जैवभार द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

पारिस्थितिक तंत्र के कार्य (Function of Ecosystem)

किसी भी पारिस्थितिक तंत्र के परिचालन में उसकी संरचना के साथ–साथ उसके क्रियात्मक स्वरूप की जानकारी भी आवश्यक है। ऊर्जा प्रवाह तथा खनिज पदार्थो का चक्रीकरण दो महत्वपूर्ण पारिस्थितिक प्रक्रम है, जो पारिस्थितिक तंत्र के कार्य से सम्बद्ध है। किसी भी पारितंत्र का कार्यात्मक स्वरूप निम्न घटकों एवं प्रक्रियाओं से स्पष्ट किया जा सकता है।

1. पारिस्थितिक स्तूप (Ecological Pyramids)
2. खाद्य शृंखला एवं खाद्य जाल (Food chain & Food web)
3. ऊर्जा प्रवाह (Energy Flow)
4. खनिज पदार्थों का चक्रीकरण (Cycling of Minerals)

1. पारिस्थितिक स्तूप – पारितंत्र की खाद्य शृंखला में प्राथमिक उत्पादकों से लेकर चरम माँसाहारियों तक कई खाद्य रीतियाँ होती है। प्रत्येक खाद्य रीति खाद्य शृंखला का एक चरण होता है तथा विभिन्न चरण परस्पर सम्बद्ध होते हैं, जिससे पारितंत्र की सुनिश्चित पोषण स्तर एवं कार्यात्मक संरचना बनती है। उत्तरोत्तर खाद्य रीतियों के परस्पर आनुपातिक संबंधों को जीव संख्या, जैवभार तथा ऊर्जा प्रवाह के आधार पर आलेखी निरूपण किया जावे तो एक स्तूपाकार आकृति बनती है। जिसमें आधार प्रथम पोषण स्तर (उत्पादक) का बना होता है और उसके त्रिभुजाकार अन्य पोषण स्तर क्रम से (शाकाहारी – मांसाहारी) बने होते है। इन आकृतियों को पारिस्थितिक स्तूप कहा जाता है।

स्तूप के प्रकार – पारिस्थितिक स्तूप तीन प्रकार के होते हैं –

(अ) जीवों की संख्या के स्तूप

(ब) जैवभार के स्तूप

(स) ऊर्जा के स्तूप

इस संकल्पना को सर्वप्रथम चार्ल्स इल्टन ने प्रस्तुत किया था। इसी कारण इन्हें अल्टोनियन पिरैमिडस भी कहते हैं।

1. जीव संख्या के स्तूप – पारिस्थितिक तंत्र में प्राथमिक उत्पादक तथा क्रमशः विभिन्न श्रेणी के उपभोक्ताओं की संख्या

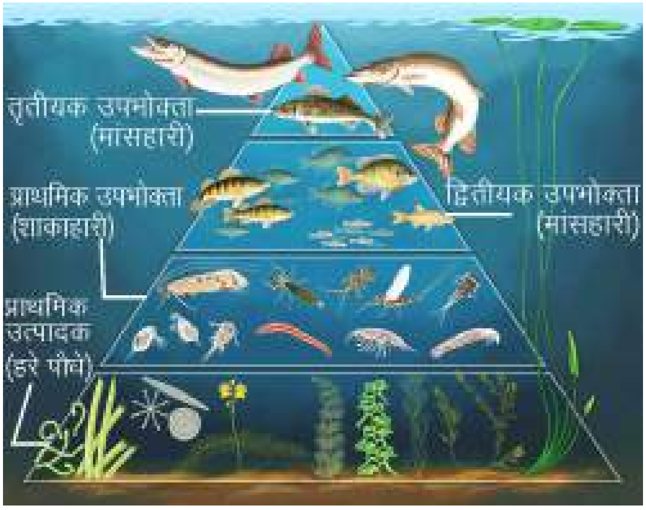

चित्र 18.3 : जीव संख्या का सीधा पारिस्थितिक स्तूप

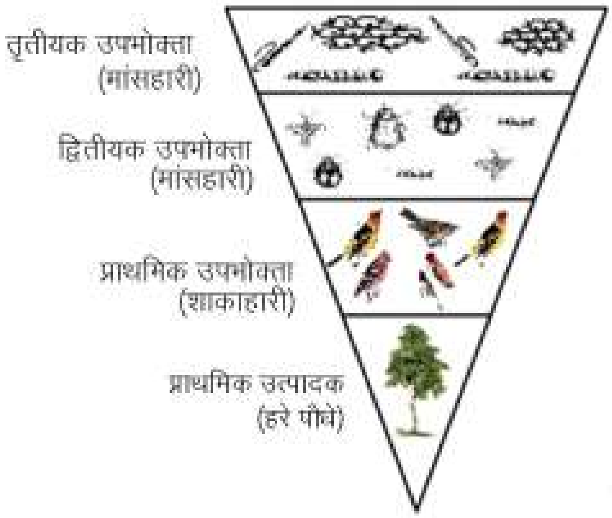

चित्र 18.4 : जीव संख्या का प्रतिलोमी स्तूप (परजीवी खाद्य शृंखला)

का सम्बन्ध दर्शाने वाला आलेखी निरूपण को संख्या का स्तूप कहा जाता है। स्तूप के आधार पर प्राथमिक उत्पादकों की संख्या रखी जाती है। घासस्थल, वन, तालाब, खेत में जीव संख्या का आरेखी निरूपण सीधा स्तूप बनाता है (चित्र 18.3)। परजीवी खाद्य शृंखला वाले परितंत्र में पारिस्थितिक स्तूप सदैव प्रतिलोमी या उल्टा होता है क्योंकि एक वृक्ष या जीव अनेक परजीवियों की वृद्धि के लिये पर्याप्त होता है (चित्र 18.4)।

2. जैवभार के स्तूप – पारिस्थितिक तंत्र में प्राथमिक उत्पादक तथा विभिन्न श्रेणी के उपभोक्ताओं के कुल जैवभार को

चित्र 18.5 : जीवभार का सीधा पारिस्थितिक स्तूप

दर्शाने वाला आलेखी निरूपण जैवभार स्तूप कहलाता है। यह सीधा या प्रतिलोमी हो सकता है। वन, घासस्थल तथा खेत पारिस्थितिक तंत्र में जैवभार का स्तूप सीधा होता है। इसमें उत्पादक से उपभोक्ताओं के उत्तरोत्तर क्रम में जैवभार की लगातार कमी होती जाती है (चित्र 18.5)। विशाल वृक्ष पारिस्थितिक तंत्र में जैवभार का पिरैमिड सदैव सीधा होता है, जबकि जीव संख्या में यह स्तूप प्रतिलोमी होता है।

जलीय पारिस्थितिक तंत्र जैसे तालाब, झील, पोखर आदि

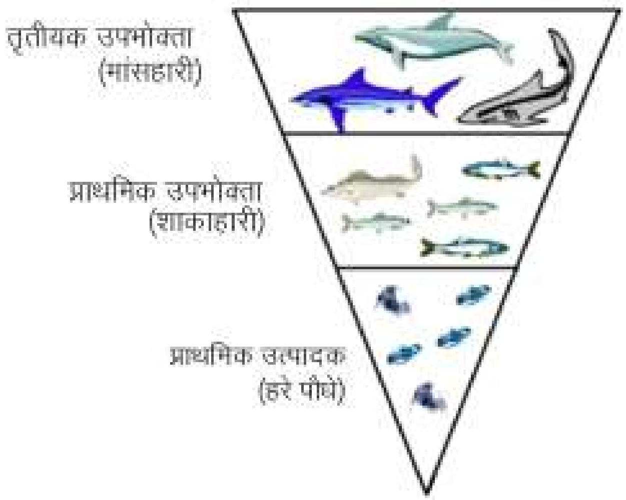

चित्र 18.6 : जीवभार का प्रतिलोमी पारिस्थितिक स्तूप

में जैवभार का स्तूप उल्टा या प्रतिलोमी होता है। इनमें पादप प्लवक, शैवाल, डायटम्स, डेस्मीड्स आदि प्राथमिक उत्पादक होते हैं, जिनका जैवभार प्राथमिक उपभोक्ताओं (जैसे शाकाहारी मछलियाँ) से कम होता है। बड़ी माँसाहारी मछलियाँ जो शाकाहारी मछलियों को खाती हैं, इनका जैवभाव सर्वाधिक होता है। इस कारण इस प्रकार के पारितंत्र में जैवभाव का पिरैमिड प्रतिलोमी होता है (चित्र 18.6)।

3. ऊर्जा के स्तूप – पारिस्थितिक तंत्र के इकाई क्षेत्र में किसी समयावधि विशेष में विभिन्न पोषस्तरों द्वारा उपयोग की गई कुल ऊर्जा की मात्रा के आरेखी निरूपण को ऊर्जा का स्तूप कहते हैं, जो सदैव सीधा ही होता है क्योंकि उत्पादकों से प्रत्येक क्रमिक उपभोक्ता स्तर पर ऊर्जा की कुल मात्रा शनैः शनैः कम होती जाती है।

हरे पौधे (प्राथमिक उत्पादक) सौर ऊर्जा को ग्रहण कर प्रकाश संश्लेषण द्वारा स्थितिज रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं। हरे पौधों में संचित यह ऊर्जा सब पोषण स्तर के प्राणियों की ऊर्जा से अधिक होती हैं तथा उच्च उपभोक्ताओं में यह संचित ऊर्जा सबसे कम होती है। इस प्रकार ऊर्जा की मात्रा प्राथमिक उत्पादक से उच्च उपभोक्ता तक लगातार उत्तरोत्तर क्रम में कम होती जाती है। इसलिये ऊर्जा के स्तूप सदैव सीधे होते हैं (चित्र 18.7)।

खाद्य शृंखला एवं खाद्य जाल

(क) खाद्य शृंखला – ऐसे कार्बनिक पदार्थ जिनके ऑक्सीकरण से पौधे तथा जन्तु जैविक ऊर्जा प्राप्त करते हैं, खाद्य कहलाते है। हरे पौधे पर्णहरित, सौर विकिरण (प्रकाश) ऊर्जा, कार्बन डाईऑक्साइड आदि की सहायता से प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाते हैं (स्वयंपोषी या प्राथमिक उत्पादक)। जिसका उपयोग प्राथमिक उपभोक्ता (शाकाहारी) करते हैं, प्राथमिक उपभोक्ताओं को द्वितीयक उपभोक्ता (माँसाहारी) एवं द्वितीय उपभोक्ता को तृतीयक श्रेणी के उपभोक्ता भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं। इस प्रकार पारिस्थितिक तंत्र में उत्पादक से उपभोक्ता श्रेणी के सभी जीव एक क्रम या शृंखला में व्यवस्थित रहते है। इस शृंखला के प्रत्येक स्तर या कड़ी या जीव को पोषण स्तर या ऊर्जा स्तर कहते हैं। अन्योन्याश्रित जीवों की एक शृंखला को, जिसमें खाने और खाये जाने की पुनरावृति द्वारा ऊर्जा का प्रवाह होता है, खाद्य शृंखला कहलाती है। एक खाद्य शृंखला के विभिन्न पोष स्तरों को क्रमशः T_1, T_2 तथा T_3 (Trophic levels) द्वारा दर्शाया जाता है (चित्र 18.8)।

(i) घास स्थल में खाद्य शृंखला–

प्राथ. उत्पादक			उपभोक्ता		चरम उपभोक्ता			
P	→	C1	→	C2	→	C3	→	C4
घास	→	टिड्डा	→	मेंढ़क	→	साँप	→	मोर
प्राथ. उत्पादक		शाकाहारी	माँसाहारी		माँसाहारी		उच्च माँसाहारी	
T1		T2	T3		T4		T5	
पोष स्तर प्रथम		पोष स्तर द्वितीय	पोष स्तर तृतीय		पोष स्तर चतुर्थ		पोष स्तर पंचम	

अपघटक C5(T6)

(i) **घास स्थल में खाद्य शृंखला**

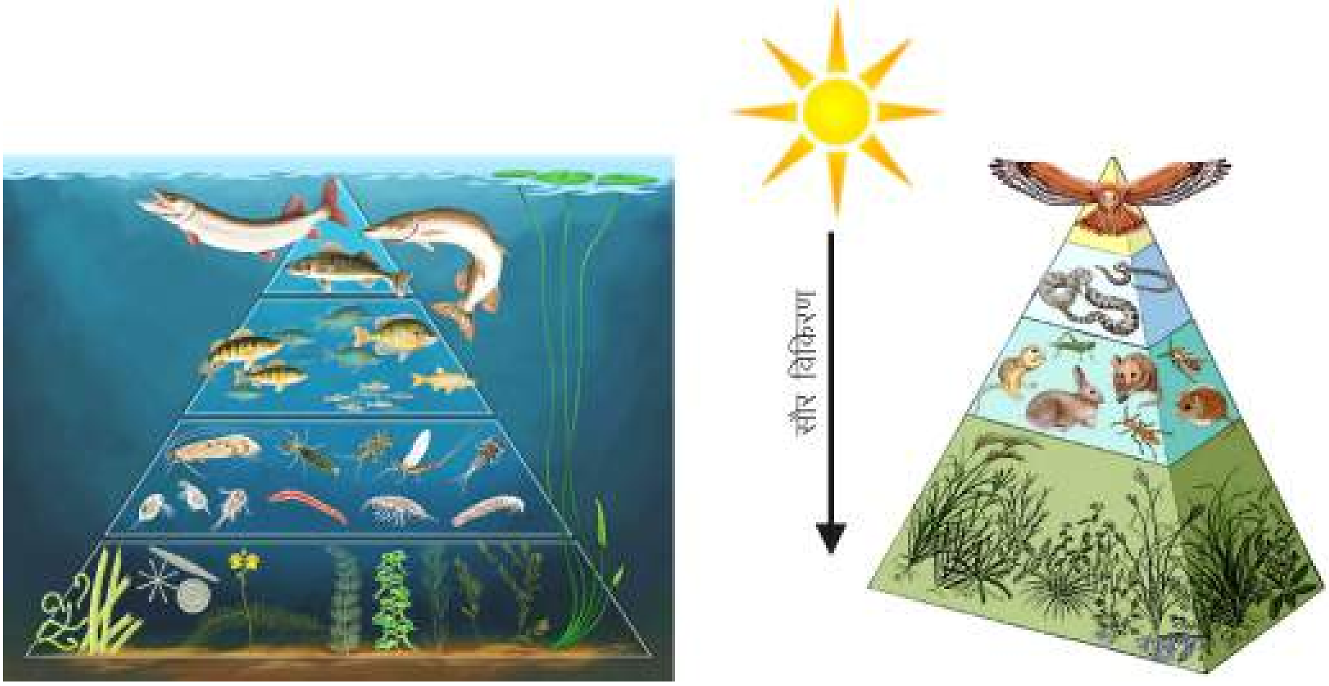

चित्र 18.7 : ऊर्जा का पारिस्थितिक स्तूप (सदैव सीधा)

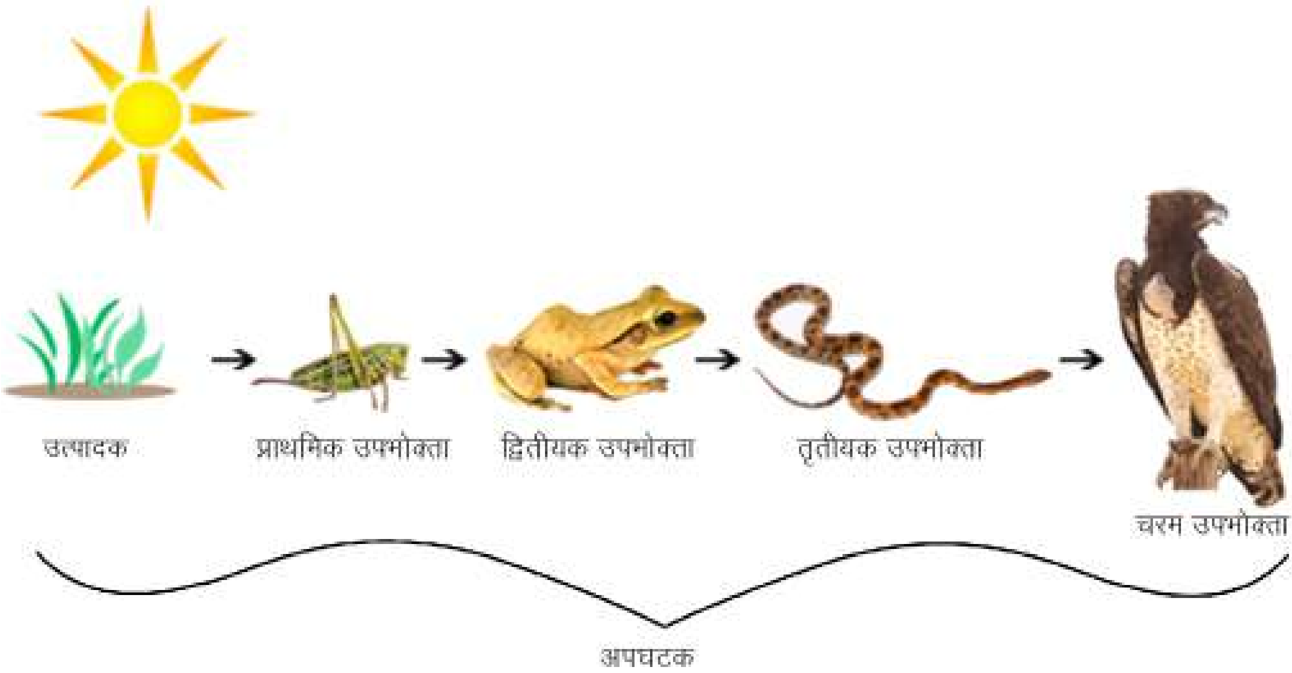

चित्र 18.8 : एक प्रारूपिक खाद्य शृंखला

(ii) **जलीय आवास में खाद्य शृंखला**

पादप प्लवक → जन्तु प्लवक → छोटी मछली → बड़ी मछली → मनुष्य

(iii) **वन पारिस्थितिक तंत्र में खाद्य शृंखला**

पौधे → हिरण → भेड़िया → शेर

प्रकृति में सामान्यतः एक खाद्य शृंखला में पांच–छः से अधिक कड़ियाँ या जीव नहीं होते हैं क्योंकि खाद्य ऊर्जा के एक पोष स्तर से दूसरे पोष स्तर में जाने पर लगभग 90 प्रतिशत ऊर्जा का ऊष्मा के रूप में अपव्यय (श्वसन क्रिया में) हो जाता है तथा चरम पोष स्तर को बहुत कम ऊर्जा उपलब्ध होती है।

खाद्य शृंखला के प्रकार – प्रकृति में तीन प्रकार की खाद्य शृंखलाएं होती हैं –

1. परभक्षी या शाकवती खाद्य शृंखला – इस प्रकार की खाद्य शृंखला प्रत्यक्ष रूप से सौर ऊर्जा पर आधारित होती हैं, जो हरे पादपों (प्राथमिक उत्पादक) से आरम्भ होकर अनुक्रम में माँसाहारी जन्तुओं से होती हुई चरम माँसाहारी जन्तुओं या उपभोक्ताओं पर समाप्त होती है। सामान्यतः यह छोटे जीवों से प्रारम्भ होकर बड़े जीवों पर समाप्त होती है। उदाहरण घास स्थलीय खाद्य शृंखला।

2. परजीवी खाद्य शृंखला – यह बड़े जन्तुओं (शाकाहारी) से प्रारम्भ होकर छोटे जीवों (परजीवी) पर समाप्त होती है। बड़े शाकाहारी जीवों को पोषिता या परपोष या आतिथेय कहते हैं। उदाहरण – जड़ें (पोषिता) → निमेटोड (परजीवी) → जीवाणु (परजीवी)।

3. अपरदी या मृतोपजीवी खाद्य शृंखला – यह आहार शृंखला मृत सड़े गले कार्बनिक पदार्थो से प्रारम्भ होती है और मृदा में स्थित अपरदभक्षी जीवों से होकर उन जीवों तक जाती हैं, जो अपरदहारी जीवों का भक्षण करते है। उदाहरण – अपरद् → केंचुआ → मेंढक → साँप → चील। इस प्रकार की खाद्य शृंखला वनों व घास स्थलीय पारितंत्रों में बहुत महत्व की हैं।

(ख) खाद्य जाल – वस्तुतः प्रकृति में उपरोक्त वर्णित सरल खाद्य शृंखलाएं नहीं पायी जाती है। अपितु विभिन्न आहार शृंखलाएं आपस में किसी न किसी खाद्य क्रम (पोष स्तर) से जुड़कर एक अत्यन्त जटिल खाद्य जाल का निर्माण करती है। इसका कारण यह है कि एक ही प्राणी कई प्रकार के प्राणियों को अपना भोजन बना सकता है। उदाहरणार्थ एक घास स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र में प्राथमिक उत्पादकों को टिड्डों एवं चूहों के अतिरिक्त खरगोश, गाय, बकरी या अन्य शाकाहारी द्वारा भी खाया जा सकता है। किसी प्रकार चूहों को सर्प तथा सर्पों को गिद्ध खाते हैं लेकिन इन्हें सर्पो व गिद्ध के अतिरिक्त अन्य जन्तुओं द्वारा भी खाया जा सकता है (चित्र 18.9)।

किसी भी पारितंत्र में खाद्य जाल जितना जटिल और विशाल होगा उतना ही वह पारिस्थितिक तंत्र स्थिरता एवं संतुलन लिये होगा क्योंकि इसमें उपभोक्ता के लिये कई प्रकार के जीव उपयोग के लिए उपलब्ध रहेंगे। किसी जीव के किसी

चित्र 18.9 : एक स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र में खाद्य जाल

कारणवश नष्ट हो जाने पर खाद्य जाल के स्थायित्व पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि खाद्य जाल में वैकल्पिक व्यवस्था होती है, जिससे उस जीव के स्थान की पूर्ति अन्य किसी जीव द्वारा हो जाती है तथा ऊर्जा का प्रवाह इन वैकल्पिक परिपथों से होने लगता है। इस प्रकार की व्यवस्था खाद्य शृंखलाओं में नहीं होती हैं। खाद्य जाल, समुदाय में जीवों के बहुदिशीय सम्बन्धों को प्रकट करता है। खाद्य जाल में ऊर्जा का प्रवाह एक दिशीय होते हुए भी अनेक वैकल्पिक परिपथों से होकर होता है।

पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा प्रवाह

पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा का प्रवेश, स्थानान्तरण, रूपान्तरण एवं वितरण ऊष्मागतिकी के दो मूल नियमों के अनुरूप होता है। कार्य करने की क्षमता को ऊर्जा कहते हैं। प्रत्येक जीव को अपनी जैविक क्रियाओं के लिये ऊर्जा की आवश्यकता होती है। किसी भी पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा का एक मात्र एवं अंतिम मुख्य स्त्रोत सूर्य है। पृथ्वी पर पहुंचने वाली कुल प्रकाश ऊर्जा का केवल एक प्रतिशत भाग प्रकाश संश्लेषण द्वारा खाद्य ऊर्जा या रासायनिक ऊर्जा में रूपान्तरित हो पाता है। वन वृक्षों में यह दक्षता 5 प्रतिशत तक हो सकती है। शेष ऊर्जा का उष्मा के रूप में ह्रास हो जाता है। पृथ्वी पर कुल प्रकाश संश्लेषण का लगभग 90 प्रतिशत भाग जलीय पौधों विशेषतः समुद्रीय डायटमों, शैवालों द्वारा सम्पन्न होता है और शेष भाग स्थलीय पौधों द्वारा होता है। इनमें भी वन वृक्ष सबसे अधिक प्रकाश संश्लेषण करते हैं। इसके बाद कृष्य पौधे तथा घास जातियाँ आती हैं। कोई भी जीव प्राप्त की गई ऊर्जा के औसतन 10 प्रतिशत से अधिक ऊर्जा अपने शरीर निर्माण में प्रयोग नहीं कर पाता है तथा शेष 90 प्रतिशत ऊर्जा का ऊष्मा के रूप में श्वसन आदि क्रियाओं में ह्रास हो जाता है अर्थात् खाद्य श्रृंखला में ऊर्जा के स्थानान्तरण में एक पोष स्तर पर लगभग 10 प्रतिशत ऊर्जा ही संग्रहित होती है। इसे पारिस्थितिक दशांक्ष का नियम कहते हैं। इस प्रकार यदि किसी स्थान पर सौर ऊर्जा की मात्रा 100 कैलोरी हो तो पादपों (प्राथमिक उत्पादक) को 10 कैलोरी, उन पादपों का चारण करके

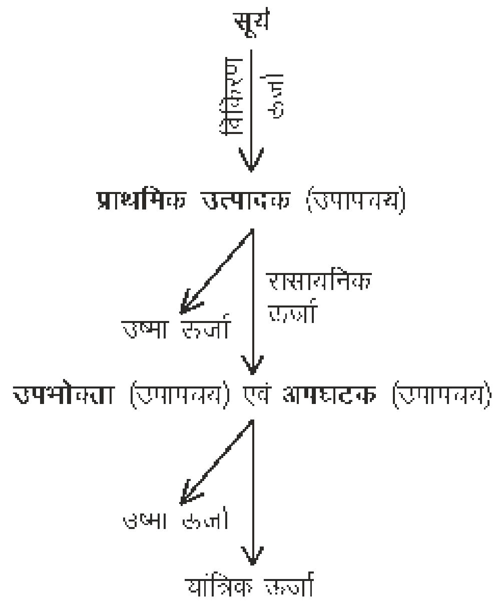

शाकभक्षी में केवल 1 कैलोरी और उस शाकाहारी (प्राथमिक उपभोक्ता) को खाकर माँसाहारी (द्वितीयक उपभोक्ता) में केवल 0.1 कैलोरी ऊर्जा संग्रहित होगी तथा उपघटक तक यह बहुत न्यून मात्रा में पहुँचेगी। वास्तव में ऊर्जा संकल्पना में ऊर्जा का एक पोष स्तर से दूसरे पोष स्तर में स्थानान्तरण एवं रूपान्तरण है।

ऊर्जा प्रवाह के प्रारूप – प्रत्येक पारिस्थितिक तंत्र में खाद्य शृंखलाओं के माध्यम से ऊर्जा प्रवाह के दो मुख्य आयाम ध्यान देने योग्य हैं –

1. ऊर्जा का एकदिशीय प्रवाह अर्थात् उत्पादक से विभिन्न श्रेणी के उपभोक्ताओं तक जिसे पुनः विपरीत दिशा में स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता है।
2. पोषण स्तर के बढ़ते क्रम में ऊर्जा प्रवाह की मात्रा उत्तरोत्तर घटती जाती हैं। यह उत्पादक स्तर पर अधिकतम तथा चरम उपभोक्ता एवं अपघटक स्तर पर न्यूनतम होती है।

उत्पादक सौर ऊर्जा का आंशिक भाग (1–5 प्रतिशत) ही अवशोषित करते हैं। इस ऊर्जा का बड़ा भाग पौधों द्वारा श्वसन (ऊष्मा) में व्यय हो जाता है और बाकी ऊर्जा द्वारा इनके शरीर का निर्माण होता है। जब इन पौधों को अन्य शाकाहारी उपभोक्ता भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं, तो रासायनिक ऊर्जा का अधिकांश भाग पुनः श्वसन द्वारा ताप ऊर्जा (लगभग 30 प्रतिशत) में रूपान्तरित हो जाता है और कुछ अंश ही उस उपभोक्ता प्राणी के शरीर में रह जाता है। माँसाहारियों के श्वसन में सवांगीकृत ऊर्जा का करीब 60 प्रतिशत भाग खर्च हो जाता है। यह क्रिया सतत् आगे भी चलती रहती है और अन्ततः विभिन्न जीवों की मृत्यु के बाद उनके शरीर में बची ऊर्जा अपघटकों द्वारा व्यय करके

ऊष्मा ऊर्जा में बदलती जाती है, जो पौधे द्वारा पुनः उपयोग में नही ली जा सकती है। पारितंत्र में अनुपयोगी प्राथमिक उत्पादन, उपभोक्ताओं का अस्वाँगीकृत भाग (यथा मलमूत्र आदि) अपरद में परिवर्तित हो जाते हैं, जो कि अपघटकों के लिये ऊर्जा स्त्रोत का काम करते है। इस प्रकार पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा चक्र में भ्रमण नहीं करके केवल प्रवाहित होती है, जिसे ऊर्जा प्रवाह कहते है। यह सदैव ही एकदिशीय होती है।

ओड़म ने इसे ऊर्जा प्रवाह के एकदिशीय प्रारूप की सहायता से स्पष्ट किया। इसमें बॉक्स जैवभार या पोषण स्तर को तथा नलिकाऐं जैविक इकाईयों के मध्य (भीतर तथा बाहर) ऊर्जा प्रवाह को निरूपित करती है। इसमें उत्पादक पोष स्तर पर

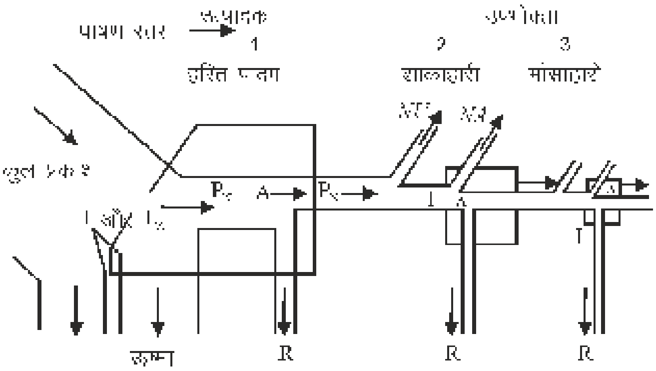

चित्र 18.10 : ऊर्जा प्रवाह का सामान्य एकदिशीय प्रारूप

उपलब्ध कुल ऊर्जा का केवल 0.001 प्रतिशत भाग ही चरम पोष पर उपयोग होता है। इसे ग्रेजिंग चैनल या चारण वाहिका भी कहा जाता है (चित्र 18.10)। इस तरह जितनी छोटी खाद्य श्रृंखला होगी, प्राप्य खाद्य ऊर्जा भी उतनी ही ज्यादा होगी, क्योंकि यहां ऊर्जा का अपव्यय या ह्रास कम होता है।

I = ऊर्जा–अन्तर्ग्रहण

L_A = पौधों द्वारा अवशोषित ऊर्जा

P_N = वास्तविक उत्पादन

P_G = सकल उत्पादन (या प्रकाश संश्लेषण)

R = श्वसन

NU = अप्रयुक्त ऊर्जा

NA = अस्वांगीकृत ऊर्जा

A = स्वांगीकृत ऊर्जा

ओडम 1968 ने एक अन्य मॉडल प्रस्तुत किया जिसे सार्वत्रिक प्रारूप कहा जाता है, जो किसी भी जीवित घटक पौधे, प्राणी, सूक्ष्म जीवी या व्यष्टि जनसंख्या या पोष समूह के लिये प्रयोज्य है। इस प्रकार का प्रारूप खाद्य श्रृंखला को चित्रित कर सकता है (चित्र 18.11)। ओड़म (1983) ने वाई आकारीय या दो चैनल

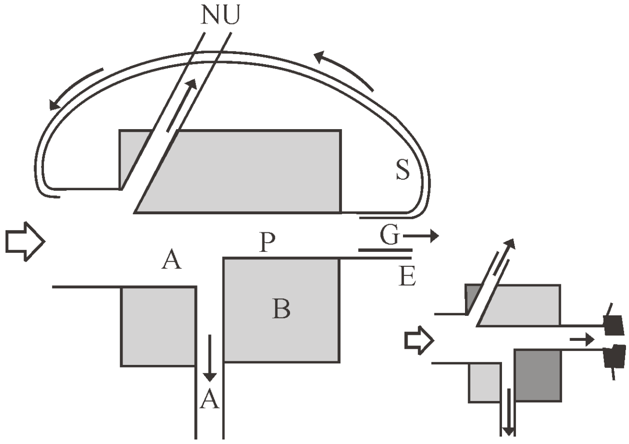

चित्र 18.11 : ऊर्जा प्रवाह का सार्वत्रिक प्रारूप

ऊर्जा प्रवाह का सामान्यीकृत प्रारूप दिया, जो स्थलीय तथा जलीय दोनों पारितंत्रों के लिये प्रयोज्य है। प्रत्येक वाई आकार के मॉडल में एक भुजा शाकवर्ती खाद्य श्रृंखला को तथा दूसरी अन्य अपरदी खाद्य श्रृंखला को निरूपित करती है (चित्र 18.12)। ऊर्जा प्रवाह की यह अन्य धारा अपरद धारा या वाहिका कहलाती है। इस प्रकार ऊर्जा प्रवाह की यह धारा या वाहिका सीधी न होकर वाई के आकार की होती है। इस प्रकार से सूर्य से प्रारम्भ होकर हरे पादपों के द्वारा खाद्य श्रृंखला में विभिन्न पोष स्तरों तथा अपघटकों में ऊर्जा का अविच्छिन्न प्रवाह होता रहता है।

I = अन्तर्ग्रहित ऊर्जा या निवेश,	A = स्वाँगीकृत ऊर्जा
NU = अप्रयुक्त ऊर्जा	P = उत्पादन
R = श्वसन	B = जैव भार
G = वृद्धि	S = संचित ऊर्जा
E = उत्सर्जी ऊर्जा	

पारिस्थितिक दक्षता

प्रत्येक पारिस्थितिक तंत्र में जीव अपना भोजन प्राप्त करता है तथा आहार को जैवभार में परिवर्तित कर दूसरे उच्च पोष स्तर को उपलब्ध कराता है। इनकी इस दक्षता को दर्शाने के लिये अनेक अनुपातों का प्रयोग किया जाता है। खाद्य श्रृंखला के विभिन्न पोष स्तरों के बीच प्रवाहित होने वाली ऊर्जा की मात्रा के

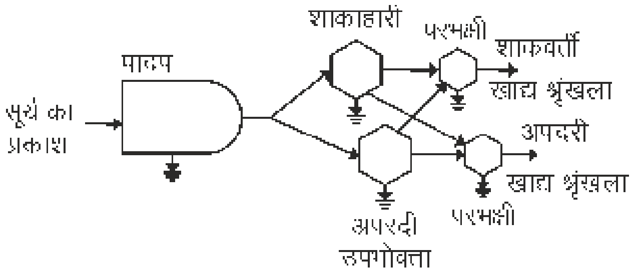

चित्र 18.12 : पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा प्रवाह का Y आकृति प्रारूप

अनुपात को यदि प्रतिशत में व्यक्त किया जावे तो इसे पारिस्थितिक दक्षता कहते हैं। किसी एक पोष स्तर में और भिन्न पोष स्तर के मध्य विभिन्न पारिस्थितिक दक्षताएं पायी जाती है। ऊर्जा की मात्रा को सामान्यतः किलो–कैलोरी प्रति वर्गमीटर प्रतिवर्ष इकाई में नापा जाता है। उत्पादक स्तर पर प्रकाश संश्लेषी दक्षता तथा वास्तविक उत्पादन दक्षता महत्वपूर्ण होती है। (एक पोष स्तर की दक्षता)। उत्पादक द्वारा सौर विकिरण ऊर्जा को उपयोग करने की दक्षता का मापन प्रकाश संश्लेषी दक्षता द्वारा किया जाता है। विभिन्न पादप प्रजातियों की वास्तविक उत्पादन दक्षता भिन्न–भिन्न होती है जैसे बड़े वृक्षों में स्तम्भ तथा टहनियों के रूप में प्रकाश संश्लेषण रहित जैवभार होता है। अतः उनकी वास्तविक उत्पादन दक्षता शैवालों की तुलना में कम होती है। उपभोक्ता स्तर (शाकाहारी एवं माँसाहारी जीवों) पर खाद्य ऊर्जा को अन्तर्ग्रहण करने की क्षमता विभिन्न जातियों में अलग–अलग होती है। उपभोक्ता के लिये स्वांगीकरण दक्षता (एक पोषक स्तर पर) तथा पारिस्थितिक दक्षता (दो पोषक स्तरों के मध्य) महत्वपूर्ण है। प्राणियों की स्वांगीकरण दक्षता और पारिस्थितिक दक्षता 10 से 50 प्रतिशत हो सकती है और यदि अधिक ऊर्जा युक्त भोजन ग्रहण किया जावे तो यही क्षमता अधिक ऊपर तक पहुंच सकती है। छोटे जीवों में प्रायः स्वांगीकृत ऊर्जा का बड़ा भाग वृद्धि के काम आता है और बड़े जीवों में (जैसे वयस्क मनुष्य, पशु, पेड़ पौधे आदि) स्वांगीकृत ऊर्जा का अधिकांश भाग श्वसन में व्यय हो जाता है। विभिन्न दक्षताओं की संगणना निम्नानुसार की जाती हैं।

(A) एक ही पोषण रीति की दक्षताएं

$$\text{प्रकाश संश्लेषी दक्षता (उत्पादन स्तर)} = \frac{\text{सकल प्राथमिक उत्पादकता}}{\text{आपतित सम्पूर्ण सौर विकिरण}} \times 100$$

$$\text{वास्तविक उत्पादन दक्षता} = \frac{\text{नेट या शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता}}{\text{सकल प्राथमिक उत्पादकता}} \times 100$$

$$\text{स्वांगीकरण दक्षता (उपभोक्ता स्तर)} = \frac{\text{स्वांगीकृत खाद्य ऊर्जा}}{\text{अन्तर्ग्रहित आहार ऊर्जा}} \times 100$$

(B) दो पोषण स्तरों के बीच दक्षताएं

$$\text{पारिस्थितिक दक्षता या पोषण रीति उत्पादन दक्षता} = \frac{\text{पोष स्तर पर जैवभार उत्पाद में ऊर्जा}}{\text{पूर्व पोषण स्तर पर जैवभार उत्पादन में ऊर्जा}} \times 100$$

$$\text{पोषण स्तर स्वांगीकरण दक्षता} = \frac{\text{पोषण स्तर पर स्वांगीकृत ऊर्जा}}{\text{निम्न पोषण स्तर पर स्वांगीकृत ऊर्जा}} \times 100$$

उत्पादकता (Productivity)

जीवों की जीवन क्रियाओं के परिणामस्वरूप निर्मित कार्बनिक पदार्थों को जैविक उत्पादन कहते हैं। हरे पौधों द्वारा उत्पादित पदार्थों की कुल मात्रा को प्राथमिक उत्पादन कहा जाता है। उपभोक्ता इस प्राथमिक उत्पादन का उपयोग कर कुछ अन्य प्रकार के कार्बनिक पदार्थों का पुनर्निर्माण करते हैं, इसे उपभोक्ता स्तर का उत्पादन या द्वितीयक (गौण) उत्पादन कहते हैं। प्रति इकाई समय में उत्पादन की दर को उत्पादकता कहते है। दूसरे शब्दों में जैवभार उत्पादकता की दर उत्पादकता कहलाती है।

पारिस्थितिक तंत्र उत्पादकता दो प्रकार की होती है – (1) प्राथमिक उत्पादकता एवं (2) द्वितीयक उत्पादकता। प्राथमिक उत्पादक (अर्थात हरे पौधे आदि) जिस दर से सौर ऊर्जा को प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा कार्बनिक पदार्थो (भोजन) के रूप में संग्रहित करते है, प्राथमिक उत्पादकता कहलाती है। इसे प्रति इकाई समय में प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादित जैवभार या संचित ऊर्जा के रूप में व्यक्त करते है। सामान्यतया इसे ग्राम प्रति मीटर^2 प्रति वर्ष या कि.कैलोरी प्रति मी^{2} प्रति वर्ष के रूप में व्यक्त किया जाता है। प्राथमिक उत्पादकता दो प्रकार की होती है – (1) सकल तथा (2) नेट या वास्तविक या शुद्ध। प्राथमिक उत्पादकों द्वारा ऊर्जा के पूर्ण अवशोषण की दर को या कार्बनिक पदार्थो यथा जैवभार के कुल उत्पादन की दर को सकल प्राथमिक उत्पादकता (GPP) कहते है तथा उत्पादकों की श्वसन क्रिया (R) के बाद बचे हुए जैव भार या ऊर्जा की दर को वास्तविक या नेट प्राथमिक उत्पादकता (NPP) कहते हैं अर्थात्

नेट प्राथमिक उत्पादकता (NPP) = सकल प्राथमिक उत्पादकता (GPP) – श्वसन दर (R)

जीवित पौधों या प्राणियों के शरीर में कार्बनिक पदार्थो की कुल मात्रा जैवभार होती है, तथा मृत भागों या जीवों को कूड़ा–करकट (Litter) कहा जाता है। किसी जैव समुदाय या पादप समुदाय में किसी एक समय पर उपस्थित जैव भार को स्थित शस्य कहते है। वास्तविक प्राथमिक उत्पादकता पौधों में जैव भार के रूप में संचित रहती है, जो शाकाहारियों तथा अपघटकों के लिये आहार के रूप में काम आती है। उपभोक्ता स्तर पर जिस दर से खाद्य ऊर्जा का उपापचय या स्वाँगीकरण होता है, द्वितीयक (गौण) उत्पादकता कहलाती है, जिसका उपयोग उपभोक्ता जैवभार के लिये करते है। इसे भी सकल या वास्तविक या नेट द्वितीयक उत्पादकता के रूप में दर्शाते है। प्राथमिक उपभोक्ता (शाकाहारी) अपनी श्वसन क्रिया में भोज्य ऊर्जा के कुछ अंश का उपयोग कर लेते हैं, शेष भाग नेट या वास्तविक द्वितीय उत्पादकता कहलाती है। प्राथमिक उत्पादकता, प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों से सर्वाधिक प्रभावित होती है, जैसे विकिरण, तापमान, प्रकाश, मृदा की आर्द्रता आदि। जलीय पारिस्थितिक तंत्र में

उत्पादकता प्रकाश के कारण सीमित रहती है। महासागरों (गहरे) में पोषक तत्व (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस आदि) उत्पादकता को सीमित करते है।

अपघटन (Decomposition)

पारिस्थितिक तंत्र में खनिज तत्वों के परिसंचरण के लिये जीवों में संग्रहित जटिल कार्बनिक पदार्थो (मृत) का अपघटन क्रिया द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड, जल तथा सरल अकार्बनिक पदार्थो में टूटना आवश्यक है। ये कार्बनिक पदार्थ जो कि उत्पादन प्रक्रिया को चलाये रखने के लिये आवश्यक है, अपघटन द्वारा पुनर्निवेशित होते हैं। इस प्रक्रिया में कवक, जीवाणुओं, अन्य सूक्ष्म जीवों के अतिरिक्त छोटे प्राणियों जैसे निमेटोड, कीट, केंचुएं आदि का मुख्य योगदान रहता है। पौधों तथा जन्तुओं के मृत अवशेषों को अपरद कहते हैं। मृत पौधों तथा प्राणियों के अवशेष (मल मूत्र आदि) जो भू सतह पर पाये जाते हैं, उन्हें सतही अपरद कहते है। मृत जड़ों तथा उनसे जुड़े रोगाणुओं को भूमिगत अपरद कहते हैं।

अपघटन की प्रक्रिया में निम्नलिखित क्रियाएं सम्मिलित हैं–

1. अपरद का भौतिक खिण्डन अपरदहारी जीवों द्वारा होता है।
2. निक्षालन में मृदा से रिसता जल घुलनशील पदार्थो जैसे शर्करा, पोषक तत्वों को अपरद से हटा देता है।
3. जीवाणुओं तथा कवकों द्वारा निमुक्त प्रकिण्वों द्वारा अपचयन क्रिया में इनका अकार्बनिक पदार्थों में रूपान्तरण होता है। प्रकृति में ये सभी क्रियाएं साथ–साथ चलती रहती है। ह्यूमस निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन मृदीय करण के अन्तर्गत किया जा चुका है। अपघटन की क्रिया से मृदा में ह्यूमीफिकेशन (ह्यूमस का निर्माण) तथा खनिजीकरण होता है। ह्यूमस से सूक्ष्म जीवों के जैवभार में वृद्धि होती है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

कुछ विशेष परिस्थितियों में मृदा के पोषक तत्व सूक्ष्मजीवों के जैवभार से बद्ध रहते है, जो दूसरे जीवों को उनकी मृत्यु तक अप्राप्य होते हैं, पोषक निश्चलता कहलाती है। इसी प्रकार निश्चलीभवन प्रक्रिया पारिस्थितिक तंत्र में पोषक तत्वों के संरक्षण

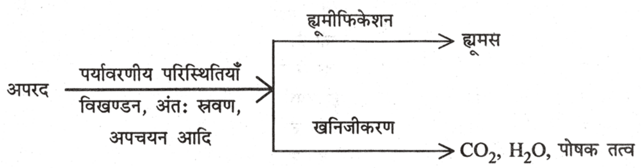

अपरदन के अपघटन से संलग्न प्रक्रियाओं का प्रवाही चित्र

में सहायक होती है। दूसरे शब्दों में सूक्ष्म पोषक तत्वों का समावेशन पोषक निश्चलता है।

अपघटन की प्रक्रिया प्रमुखतः जलवायवीय कारकों तथा अपरद के रासायनिक गुणों द्वारा प्रभावित रहती है। आर्द्र जलवायु तथा तापमान की अधिकता अपघटन की प्रक्रिया को बढ़ा देते हैं। कम तापमान में यह प्रक्रिया बहुत धीमी हो जाती है।

जैव–भू–रासायनिक चक्र

हरे पौधे (प्राथ उत्पादक) अपनी वृद्धि के लिये सौर ऊर्जा, जल, कार्बनडाईऑक्साइड के अतिरिक्त मृदा से अनेक खनिज तत्व भी ग्रहण करते हैं, जो खाद्य श्रृंखलाओं के विभिन्न पोषण स्तरों के जीवों में से होते हुए, जीवों की मृत्यु के पश्चात् अपघटन द्वारा पुनः मृदा में लौट आते हैं तथा पुनः हरे पौधों द्वारा प्रयुक्त हो जाते हैं। जैविक समुदाय का प्रत्येक पोषक अणु अजैविक वातावरण से प्रविष्ट होता है तथा पुनः वातावरण को लौट जाता है। इस प्रकार पोषक तत्वों का बारम्बार प्रयोग होता है अर्थात् इनका पुनःचक्रण होता है। इस प्रकार ऊर्जा का एकदिशीय प्रवाह तथा पोषक पदार्थो का परिसंचरण पारिस्थितिकी के दो मूल सिद्धान्त है। खनिज अर्थात् रासायनिक तत्वों के जीवों एवं भूमि के माध्यमों से होकर चक्रीय भ्रमण के कारण ही इस क्रिया को जैव भू–रासायनिक चक्रण या पदार्थो का चक्रीकरण कहा जाता है। वस्तुतः कुछ तत्व वायुमण्डल से होकर भी चक्रीय भ्रमण करते हैं, जैसे कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन आदि। वास्तव में इन तत्वों के परिसंचरण में वायुमण्डल, स्थलमण्डल व जलमण्डल तथा जीवों का संघटित योगदान होता है। खनिज तत्वों के परिसंचरण को उनके भ्रमण पथ के अनुसार दो प्रकारों में बाँटा जाता है–

(अ) गैसीय प्रकार – इन तत्वों का मुख्य स्त्रोत तथा संचयक कुण्ड या भण्डार वायुमण्डल होता है। उदाहरण – कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, गंधक (सल्फर) आदि।

(ब) स्थलीय या अवसादी प्रकार – इन तत्वों का दूसरा प्रमुख भण्डार या स्त्रोत भूमि स्वयं है। ये तत्व भूमि से पौधों द्वारा ग्रहण किये जाते है। उदाहरण – फॉस्फोरस, कैल्सियम, मैग्निशियम, सोडियम आदि। कुछ चक्रों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है–

1. नाइट्रोजन चक्र – सभी जीवों को पोषण में नाइट्रोजन का विशेष महत्व है। यद्यपि वायुमण्डल में लगभग 78 प्रतिशत नाइट्रोजन होते हुए भी गैसीय रूप में यह पौधों के लिए सर्वथा अनुपयोगी है, जब तक यह गैस नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा अमोनिया और नाइट्रेटों में परिवर्तित नहीं होती, पौधे इसे सीधे जड़ों द्वारा अवशोषित नहीं कर सकते है। प्रायः स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र में नाइट्रोजन यौगिकीकरण सहजीवी जीवाणुओं द्वारा होता है, जबकि जलीय पारितंत्र में यह बहुतायत में स्वतंत्रजीवी जीवाणुओं द्वारा होता है (चित्र 18.13)।

2. फॉस्फोरस चक्र – फॉस्फोरस विभिन्न शैलों के अपरदन द्वारा मृदा में एकत्र होता है। जहाँ से अकार्बनिक फॉस्फेट के रूप

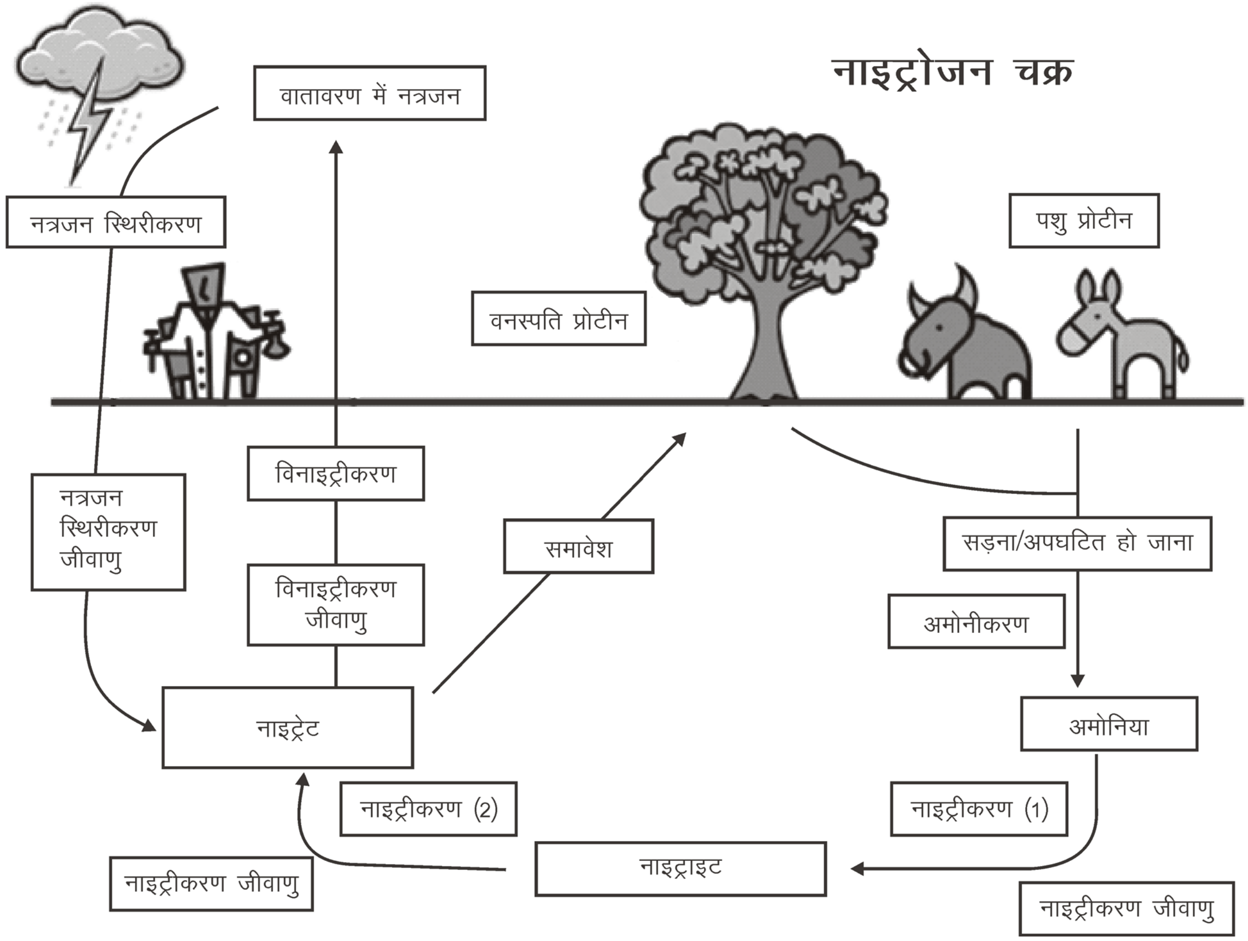

चित्र 18.13 : नाइट्रोजन चक्र

में पौधों द्वारा अवशोषित होता है। विभिन्न पोष स्तर के पौधों व प्राणियों के शरीर में उपापचयित होकर इन जीवों की मृत्योपरान्त सूक्ष्म जीवों (फॉस्फेटीकरण जीवाणुओं) की अपघटन और खनिजीकरण की क्रियाओं द्वारा कार्बनिक से अकार्बनिक फॉस्फेट में परिवर्तित होकर पुनः मृदा में पौधों के लिए प्राप्त हो जाते है। उच्च स्तरीय पादपों में फॉस्फोरस का अवशोषण, कवकमूल की उपस्थिति में तीव्रता से होता है। ये तत्व किसी भी समय गैसीय अवस्था में वायुमण्डल में नहीं पाये जाते है। जलीय आवासों के प्रदूषण में इनका प्रमुख योगदान है। यह जीवों की कोशिकीय ऊर्जा सम्बन्धी क्रियाओं में एटीपी के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है तथा जीवद्रव्य का एक आवश्यक अंश है। यह हड्डी तथा दाँतों का प्रमुख अवयव है। फॉस्फोरस, कैल्शियम इत्यादि कुछ अन्य तत्वों की बड़ी मात्राएं जल के साथ समुद्र के गर्भ में पहुंचती रहती है। वहां पर शनैः शनैः चट्टानों में रूपान्तरित हो जाती है तथा बहुत लम्बे समय तक चक्रीकरण के इस क्रम से अलग हो जाती है। पृथ्वी की भूगर्भीय उथल–पुथल के कारण जब ये चट्टानें, जीवाश्म तथा ज्वालामुखी खुल जाते हैं, तो उनमें उपस्थित फॉस्फोरस अपरदन द्वारा पुनः मृदा में मिलकर पौधों को उपलब्ध

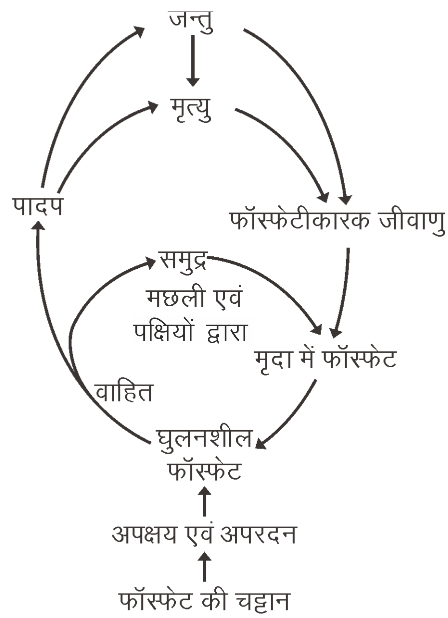

चित्र 18.14 : फॉस्फोरस चक्र

हो जाते है (चित्र 18.14)।

3. सल्फर या गंधक चक्र – गंधक का भण्डार मुख्यतः ठोस रूप में पृथ्वी के अंदर रहता है तथापि यह पौधों को ऑक्सीकृत (सल्फेट, सल्फर डाई ऑक्साइड) या अपचयित (हाइड्रोजन सल्फाइड) के रूप में ही प्राप्त होता है। सल्फर अनेक प्रकार के प्रोटीन्स, विटामिन्स तथा एन्जाइमों के निर्माण में प्रयुक्त होता है। पादप प्रायः इसे मृदा से सल्फेट आयन के रूप में अवशोषित करते हैं, जहाँ से यह विभिन्न पोषस्तर के प्राणियों की उपापचयन क्रियाओं से होकर गुजरता है।

उपभोक्ता तथा उत्पादक जीवों की मृत्यु पश्चात् अनॉक्सी जीवाणु जैसे डिसल्फोविब्रो, एरोबैक्टर तथा ऑक्सीकारक जीवाणु, थायोबेसिलस आदि शरीर के कार्बनिक सल्फर युक्त यौगिकों को हाइड्रोजन सल्फाइड में बदल देते है। इस हाइड्रोजन सल्फाइड का जीवाणुओं द्वारा ऑक्सीकरण होता है, जिसके फलस्वरूप पुनः प्राप्त हो जाता है। अपघटन के इस कार्य में जीवाणुओं के अतिरिक्त कवक जैसे ऐस्परजिलस, न्यूरोस्पोरा आदि का विशेष योगदान होता है। इसके अतिरिक्त कुछ प्रकाश संश्लेषी जीवाणु जैसे हरे तथा बैंगनी सल्फर जीवाणु प्रकाश संश्लेषण की क्रियाओं में हाइड्रोजन सल्फाइड का उपयोग करते है, जिसके कारण सल्फर विमुक्त हो जाती है। यह सल्फर, सल्फेट आयन के रूप में मृदा में रहती है। जहाँ से पौधे इसका पुनः अवशोषण करते हैं

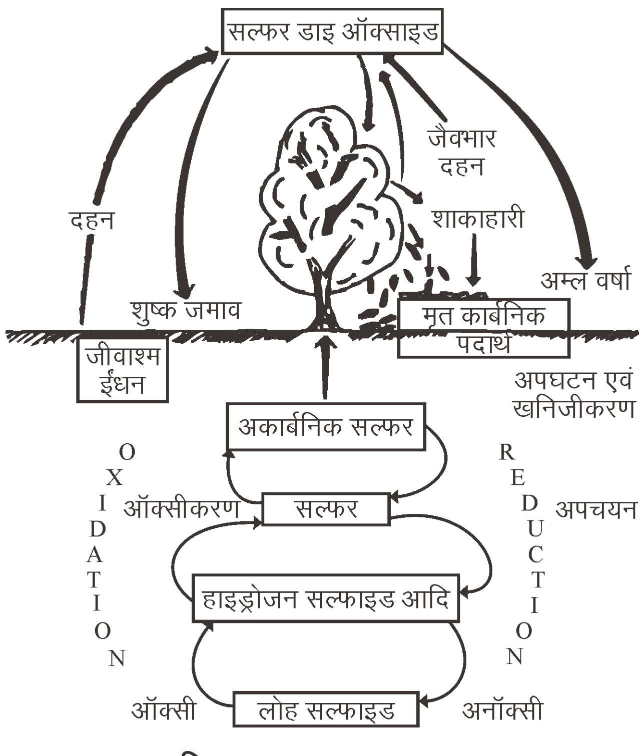

चित्र 18.15 : सल्फर चक्र

(चित्र 18.15)।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. इकोसिस्टम (पारिस्थितिक तंत्र) का सर्वप्रथम प्रयोग सर आर्थर टेन्सले ने 1935 में किया था।
2. वातावरण के जैविक एवं अजैविक कारकों के समाकलन के फलस्वरूप निर्मित तंत्र, पारिस्थितिक तंत्र कहलाता है।
3. इकोसिस्टम शब्द प्रकृति के समतुल्य है क्योंकि इसमें समाकलित वातावरण के जैविक तथा अजैविक कारक सदा परस्पर क्रिया करते रहते है।
4. सम्पूर्ण जैवमण्डल अर्थात् पृथ्वी को एक पारिस्थितिक तंत्र माना गया है, कोले (1958) ने इसके लिये पारिस्थितिक मण्डल शब्द का प्रयोग किया।
5. जैविक घटक में प्राथमिक उत्पादक (हरे पादप), उपभोक्ता तथा अपघटक होते है। वृहद् उपभोक्ता तीन प्रकार के होते हैं – प्राथमिक उपभोक्ता, द्वितीयक उपभोक्ता एवं तृतीय उपभोक्ता।
6. अजैविक घटक में अकार्बनिक पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ तथा जलवायुवीय कारक समाहित होते है।
7. उत्तरोत्तर खाद्य या पोषण रीतियों के परस्पर आनुपातिक संबंधों के आलेखी निरूपण को पारिस्थितिक स्तूप कहते हैं, ये तीन प्रकार के होते हैं – जीव संख्या के स्तूप, जैवभार के स्तूप एवं ऊर्जा के स्तूप।
8. खाद्य जाल में ऊर्जा प्रवाह के वैकल्पिक परिपथ पाये जाते हैं।
9. ऊर्जा का प्रवाह सदैव एकदिशीय होता है तथा एक पोष स्तर से दूसरे पोष स्तर में ऊर्जा के स्थानान्तरण में लगभग 90 प्रतिशत ऊर्जा का ह्रास हो जाता है।
10. खनिज या रासायनिक तत्वों के जीवों एवं भूमि के माध्यमों से होकर चक्रीय भ्रमण को जैव–भू–रासायनिक चक्रण कहते हैं।
11. उत्पादकता तथा अपघटन पारितंत्र की दो प्रमुख क्रियायें हैं जो इसे स्थायित्व तथा संतुलन प्रदान करती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. इनमें से कौनसा जल अलवणीय नहीं है–
   (अ) झरना (ब) पोखर
   (स) नदी (द) ज्वारनद्मुख
2. इनमें से कौनसा कृत्रिम पारिस्थितिकी तंत्र है–
   (अ) मरूस्थल (ब) तालाब
   (स) खेत (द) उपरोक्त सभी

3. जीवों की संख्या के स्तूप में इनमें से कौनसा आरेखी निरूपण सीधे स्तूप को दर्शाता है–

   (अ) घासस्थल (ब) वन

   (स) खेत (द) उपरोक्त सभी

4. उत्पादक पोष स्तर पर उपलब्ध कुल ऊर्जा का कितने प्रतिशत भाग चरम पोष पर उपयोग होता है–

   (अ) 0.001% (ब) 0.002%

   (स) 0.003% (द) 0.005%

5. इनमें से कौनसा स्तूप सदैव सीधा होता है–

   (अ) जीवों की संख्या का स्तूप

   (ब) जैवभार का स्तूप

   (स) ऊर्जा का स्तूप

   (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. पारिस्थितिक तंत्र को परिभाषित कीजिये।
2. पारिस्थितिक तंत्र के घटकों को संक्षिप्त में समझाइये।
3. जैवभार के स्तूप को परिभाषित कीजिये।
4. खाद्य शृंखला को समझाइये।
5. पारिस्थितिक दक्षता को समझाइये।
6. सकल एवं वास्तविक उत्पादकता में अन्तर बताइये।
7. जैव–भू–रासायनिक चक्रण को परिभाषित कीजिये।
8. जैविक उत्पादकता को समझाइये।
9. पारिस्थितिक तंत्र में खाद्य शृंखलाओं के माध्यम से ऊर्जा प्रवाह को समझाइये।
10. खाद्य शृंखला एवं खाद्य जाल में अन्तर बताइये।
11. पारितंत्र की कार्यात्मक स्वरूप को स्पष्ट कीजिये।
12. विषमपोषी उपभोक्ता को परिभाषित कीजिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. पारिस्थितिक तंत्र के घटकों का वर्णन कीजिये।
2. पारिस्थितिक स्तूप को परिभाषित कीजिये तथा इसके प्रकार समझाइये।
3. खाद्य शृंखला के प्रकारों को समझाइये।
4. पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा प्रवाह का वर्णन कीजिये।
5. पारिस्थितिक दक्षता को विस्तार से समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. पारिस्थितिक तंत्र में उत्पादकता एवं अपघटन की क्रियाओं को विस्तार से समझाइये।
2. जैव भू–रासायनिक चक्र को विस्तार से समझाइये।

उत्तरमालाः 1 (द) 2 (स) 3 (द) 4 (अ) 5 (स)